Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 GISRRJ | Volume 5 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

साम्प्रदायिकता के संदर्भ में 'तमस' का पुनर्विश्लेषण

श्रवण सरोज
शोधार्थी (पी-एच.डी.)
हिन्दी विभाग, जामिया मिल्लिया इसलामिया, नई दिल्ली, भारत ।

Article Info
Volume 5, Issue 1
Page Number : 111-116

Publication Issue :
January-February-2022

Article History
Accepted : 01 Feb 2022
Published : 10 Feb 2022

शोध-सार :- सिनेमा को मनोरंजन का एक साधनमात्र माना जाता है लेकिन सिनेमा मनोरंजन का साधनमात्र ही नहीं हैं बल्कि इसे एक ऐसे दस्तावेज़ के रूप में देखा जा सकता है जो किसी देश की सामाजिक-राजनीतिक गतिविधियों को हम तक सुगमता से पहुंचाती है। सिनेमा के दो वर्ग हैं- मुख्यधारा की सिनेमा और समानांनतर सिनेमा जिसे यथार्थवादी सिनेमा भी कहते है। मुख्यधारा की सिनेमा दर्शकों को मनोरंजन परोसती हैं वही समानांनतर सिनेमा अपने दर्शकों को समाज के यथार्थों से रू-ब-रू कराती हैं और इनके दर्शक एक खास वर्ग के बुध्दिजीवी वर्ग होते हैं। गोविंद निहालानी इन्हीं यथार्थवादी फिल्मों के एक लोकप्रिय निर्माता है। इनकी फिल्मों की खासियत यह है कि इन्होंने अपनी फिल्मों के माध्यम से समाज के हिंसात्मक पहलुओं को बारीकी से दर्शाया है। उन्होंने बचपन में भारत विभाजन के दौरान हुये साम्प्रदायिक हिंसा को अपनी आँखों से देखा था और वे सब हिंसात्मक चित्र उनके मन-मस्तिष्क पर छाया हुआ था। यही कारण है उन्होंने भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' पर फिल्म बनाने में रूचि दिखाई। फिल्म में उपन्यास की मूल संवेदना से कोई छेड़खानी नहीं की गई हैं। 'तमस' (1987) साम्प्रदायिकता पर आधारित फिल्म है। प्रस्तुत फिल्म में भारत विभाजन से पाँच दिन पूर्व से लेकर विभाजन के दिन तक की घटनाओं का चित्रण किया गया हैं। पंजाब के एक गांव की पृष्ठभूमि में घटनेवाली घटनाओं के जरिये सम्पूर्ण भारत में उस दौरान घटनेवाली घटनाओं का चित्र साकार हो उठा हैं। ब्रिटिशों और विविध राजनीतिज्ञों के षडयंत्रों के कारण भारतभूमि में साम्प्रदायिकता की भावनाओं का प्रसार हुआ था। उस साम्प्रदायिकता की आग ने लाखों गरीब लोगों के प्राण ले लिये, असंख्य लोग बेघर होकर शरणार्थी बने, देश का बंटवारा हो गया जिससे साम्प्रदायिकता की भावना हमेशा हमेशा के लिये लोगों के मन-मस्तिष्क में छा गई। मुसलमान नेताओं ने उस स्थिति का भरपूर फायदा उठाकर पाकिस्तान का निर्माण करने में सफल हुये और हिन्दू संगठन ने भारत को एक हिन्दूवादी राष्ट्र बनाने की शपथ ग्रहण कर ली। वही सिक्ख भी अपने हितों और अधिकारों की रक्षा के लिये अलगाववाद को अपना लिया था। सन् 1947 में भारत विभाजन के दौरान साम्प्रदायिकता की भावना ने किस तरह से विविध धर्मों के लोगों को आपस में एक-दूसरे के विरूध्द करके उनमें आपसी

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

भय, संदेह, अविश्वास और हिंसा की भावनाओं को जन्म दिया हैं। इन्हीं सभी घटनाओं का यथार्थ चित्रण गोविंद निहालानी ने प्रस्तुत फिल्म में किया हैं।

बीज शब्द : सांप्रदायिकता, तमस, भारतीय समाज, सिनेमा, पुनर्पाठ ।

सिनेमा को प्राय: हल्के-फुल्के मनोरंजन का माध्यम माना जाता है। लेकिन जबरीमल्ल पारख उसे सर्जक कला मानते है, जिसमें सामाजिक यथार्थ को सृजनशील ढंग से चित्रित किया जाता हैं।[1] सिनेमा की मुख्यधारा का उद्देश्य होता है अधिक से अधिक मुनाफा कमाना यही कारण है कि इस धारा के फिल्मकारों ने मनोरंजन के पुट को अपने फिल्मों में अधिक से अधिक प्रयोग किया है। वही दूसरी ओर समानांनतर सिनेमा का उद्देश्य मुनाफा कमाना नहीं बल्कि समाज की सड़ी गली व्यवस्थाओं के प्रति विरोध प्रकट करना हैं यही कारण है इन फिल्मों के लिये जो विषय चुने गये हैं, वे ज़मीनी यर्थाथ से जुड़ी हुई हैं। समानांनतर फिल्म के फिल्मकारों ने अपने फिल्मों में सामाजिक तथा राजनीतिक यथार्थ को पूरी सच्चाई के साथ दिखाने की हिम्मत की हैं। समानांनतर सिनेमा के फिल्मकार, "एक कहानी विकसित करता है। वह विषय-वस्तु को कलात्मकता के साथ प्रस्तुत करता हैं। वह किसी संभावना का आश्रय नहीं लेता वरन जो जिन्दगी में घटित हो रहा है उस पर पूरा विश्वास करता है। इसलिये कला फिल्मों में कोई जादुई आकर्षण नही होता वरन कुछ होता भी है तो विकास की प्रक्रिया में वह छिन्न-भिन्न हो जाती हैं।"[2] जहां तक मुख्यधारा के फिल्मों की बात है तो हम पाते है कि फिल्मों की भाषा, शैली और प्रवृत्तियाँ समय-समय पर बदलती आयी हैं लेकिन समानांनतर फिल्मों के विषयों को देखे तो हम पायेंगे कि इन फिल्मों में मानव जीवन के मूलभूत यथार्थ का चित्रण किया गया हैं। गोविंद निहालानी इन्हीं यथार्थवादी फिल्मकारों में शामिल है और 'तमस' (1987) फिल्म के निर्माता हैं। समानांनतर सिनेमा के दर्शकों के मध्य गोविंद जी काफी लोकप्रिय हैं। उनको जो लोकप्रियता हासिल हुई हैं उसका मूल कारण यह है कि उनके फिल्मों में अनुभूति की सच्चाई और अभिव्यक्ति का खलापन हैं। यही कारण है कि गोविंद जी अपने पहली फिल्म 'आक्रोश' (1980) से ही दर्शकों में लोकप्रिय बन गये थे। गोविंद निहालानी का जन्म ऐसे दौर में हुआ था जब ब्रिटिश भारत में ब्रिटिश शासकों की कूटनीतियों के कारण हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदाय के लोग आपस में लड़ रहे थे। स्वाधीनता आंदोलन में चलाये जाने वाले सामाजिक तथा राजनीतिक आंदोलनों में होने वाले हिंसाओं, मारकाट, भयानक आतंक और खौफ का वास्तविक अनुभव उन्होंने बचपन में ही कर लिया था। यही कारण है कि फिल्म 'तमस' (1987) में उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों के बीच होनेवाले दंगें-फसादों का जीवंत चित्रण करने में सफल हुये हैं।

'तमस'(1987) फिल्म हिन्दी के प्रसिध्द साहित्यकार भीष्म साहनी की मूल उपन्यास 'तमस' पर आधारित हैं। इस उपन्यास में भारत विभाजन के दौरान घटनेवाली घटनाओं का मार्मिक चित्रण किया गया है। गोविंद जी ने अपनी फिल्म में उपन्यास की मूल संवेदना को पूरी तरह से सुरक्षित रखा हैं। चूंकि यह फिल्म 'तमस' उपन्यास का पुर्नपाठ करके बनाई गई हैं इसके बावजूद इसकी मूल भावना से कोई छेड़खानी नहीं की गई हैं। 'तमस'(1987) फिल्म की पृष्ठभूमि में भारत विभाजन के दौरान घटनेवाली घटनाओं का मार्मिक चित्रण हैं। यह फिल्म साम्प्रदायिकता पर आधारित है। साम्प्रदायिकता का अर्थ हैं "एक विचार या विचारधारा जो अपने विशिष्ट सम्प्रदाय के लोगों के अनुयायियों के प्रति नफरत के भाव विकसित करती है। कभी कभी इसे किसी धर्म या धार्मिक कठमुल्लेपन, अनुदारवाद से निकटता के अर्थों में भी प्रयुक्त किया जाता हैं।''[3] बिपनचंन्द्र ने साम्प्रदायिकता के अर्थ को स्पष्ट करते हुये लिखा है, "साम्प्रदायिकता मौलिक रूप से और सबसे उपर एक विचारधारा है जिसके साम्प्रदायिक दंगें और अन्य रूपों में साम्प्रदायिक हिंसा परिणाम है। साम्प्रदायिक विचारधारा तो बिना हिंसा के अस्तित्व बनाये रख सकती है परंतु साम्प्रदायिक हिंसा बिना साम्प्रदायिक विचारधारा के नहीं हो सकती।''[4] प्रत्येक सम्प्रदाय के लोगों में बचपन से ही अपने सम्प्रदाय के प्रति विशेष लगाव उत्पन्न हो जाता है। जैसे-जैसे वह बच्चा बड़ा होता जाता है वैसे- वैसे उसमें अपने सम्प्रदाय के प्रति साम्प्रदायिक भावना प्रगाढ़ होता रहता है। कभी-कभी यह भावना इतनी प्रबल हो जाती है कि यह कट्टरता का रूप धारण कर लेती है। यह कट्टरपंथी लोग ही कौम के नाम पर अपने सम्प्रदाय के

लोगों को दूसरे सम्प्रदाय के विरूध्द भड़काने का काम करते हैं, जिसके परिणाम दंगे–फ़साद के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं। भारतीय संदर्भ में "साम्प्रदायिकता से आशय मुख्य रूप से हिदुओं और मुसलमानों के बीच संदेह, भय और प्रतिस्पर्ध्दा, कटुता और हिंसा से हैं।''[5] यह समस्या भारत में दो गुटों की आपसी अविश्वास और अधिकारों तथा हितों की वास्तविकता काल्पनिक संर्घष के कारण जन्मी हैं। यह अपनी प्रकृति से ही बताती हैं कि हर समुदाय की अलग सामूहिक चेतना और साथ में अलग सामूहिक साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों की उपस्तिथि होती हैं जो एक इकाई के रूप में एक–दूसरे के खिलाफ क्रिया और प्रतिक्रिया कर सकती हैं।[6] जहां तक भारतीय समाज में साम्प्रदायिकता की भावना तथा साम्प्रदायिक दंगे की उत्पत्ति का सवाल हैं, तो हम पाते हैं कि साम्प्रदायिक तनाव छोटे–छोटे कारणों से प्रारंभ हो जाते हैं। मुसलमानों द्वारा गाय के वध के कारण, मस्जिद के सामने मरा हुआ सुअर फेंकने पर, मंदिर और मस्जिद आदि का अपमान करने पर दंगें शुरू हो जाते हैं। गोविंद निहालानी ने अपने फिल्म 'तमस' (1987) में ऐसी ही एक घटना को दर्शाया है, जिस कारण दंगा फैलता है। ब्रिटिश अधिकारी डिप्टी कमीश्नर रिचर्ड के षडयंत्र के अनुसार नाथु (ओम पुरी) जो पेशे से एक चमार है, के द्वारा एक सुअर को मारकर मस्जिद के सामने फेंका जाता है। यह घटना मुसलमानों की भावना को ठेस पहुँचाती है और इस घटना के लिये हिन्दुओं को जिम्मेदार मान लिया जाता है और बदले में मुसलमानों द्वारा एक गाय को काटकर मंदिर की सीढ़ियों पर फेंका जाता है। चूंकि साम्प्रदायिकता की भावना लोगों की भावनाओं से जुड़ी होती है यही कारण है कि जब इस तरह की कोई घटना घटित होती है तो दूसरे सम्प्रदाय के प्रति द्वेश की भावना प्रबल हो जाती है जिसका परिणाम दंगे फसाद होते हैं। प्रस्तुत फिल्म में इसी स्थिति को भलीभांति समझाने की कोशिश की गई हैं। जब नाथु (ओम पुरी) को यह पता चलता है कि उसके द्वारा मारे गये सुअर को मस्ज़िद के सामने फेंकने के कारण गांव में तनाव फैलता हैं और विपरीत धर्मों के लोगों द्वारा बदले की भावना से गांव की मंडी और बाज़ारों को लूटकर जला दिया जाता हैं, तो इस तनाव का ज़िम्मेदार नाथू अपने आप को मानता है और परेशान होकर गली मुहल्ले का ज़ायजा लेता रहता है, इसी सिलसिले में जब वह एक चाय की दुकान के बाहर बैठकर चाय पी रहा होता है, तब उसे दुकान के अंदर बैठे दो मुस्लिम व्यक्तियों के द्वारा कही जाने वाली निम्न बातें सुनाई पड़ती है–

व्यक्ति 1– खंज़ीर और मस्ज़िद के सामने बड़ी नापाक हरकत है।

व्यक्ति 2– और वह गाय मंदिर की सीढ़ियों पर काटकर फेंकी हैं किसी ने वह भी तो नापाक हरकत है।

व्यक्ति 1– अरे रहने दो मियाँ।

व्यक्ति 2– भाई मंदिर हो या मस्ज़िद ऐसी हरकत नापाक है।

व्यक्ति 1– अरे चुप रहो मियाँ उनकी (काफ़िरों की) इतनी भी तरफ़दारी मत करो।[7]

प्रस्तुत संवाद से स्पष्ट है कि हिन्दू हो या मुसलमान जब इनकी धार्मिक भावनाओं का अपमान होता हैं और इनको अपमानित करनेवाला सच में हिन्दू या मुसलमान ना भी हो तब भी इनके लिये एक दूसरे को दोषी मान लिया जाता हैं जबकि फिल्म में चित्रित इस घटना के पीछे ब्रिटिशों की गहरी चाल थी ताकि हिन्दू और मुसलमानों में भेदभाव उत्पन्न करके भारत में वे अपने शासन को मज़बूत बना सके।

साम्प्रदायिकता का संबंध धर्म से भी जोड़ा जाता है लेकिन, " किसी धर्म और व्यवस्था के प्रति प्रतिबध्दता स्वंयम में साम्प्रदायिकता नहीं होती, वह तभी साम्प्रदायिकता का रूप ग्रहण करती हैं, जब उसका दुर्रपयोग निहित या संकीर्ण स्वार्थों के लिये किया जाता है और जब उसे अन्य धार्मिक सम्प्रदाय या राष्ट्र के विरूध्द प्रयोग में लाया जाता हैं। साम्प्रदायिकता धर्म का अनुचित शोषण हैं।''[8] प्रस्तुत फिल्म में ब्रिटिश अधिकारी डिप्टी कमीश्नर रिचर्ड के जिरये यही बात स्पष्ट करने की कोशिश की गई हैं। जब रिचर्ड की पत्नी लिज़ा उससे कहती हैं कि वह हिन्दू–मुसलमानों के बीच हो रहे दंगें को रोककर दोनों सम्प्रदायों के बीच में शांति स्थापित क्यों नहीं कर देते तब रिचर्ड जबाव में अपनी पत्नी से कहता हैं, "डार्लिंग , हुकूमत करनेवाले यह नही देखते कि प्रजा में कौन–कौन सी समानतायें पायी जाती हैं, उनकी दिलचस्पी तो यह देखने में होती हैं कि वे किन–किन बातों में एक–दूसरे से अलग हैं।"[9] रिचर्ड की बातों से स्पष्ट होता है कि जो शासक वर्ग होते हैं वे अपनी

शासन व्यवस्था को मज़बूत करने के लिये आम जनता को आपस में लड़ाते रहते हैं ताकि प्रजा का ध्यान अपने शासक वर्ग से हटा रहें जिससे शासक वर्ग आम जनता पर मनमाने तौर पर शासन कर पाये।

साम्प्रदायिक हिंसा का अर्थ एक ऐसी हिंसा हैं जिसमें किसी व्यक्ति या समूह को धार्मिक पहचान के आधार पर चिन्हित करके हिंसा का शिकार बनाया जाता हैं।[10] प्रस्तुत फिल्म में देखा जाय तो ऐसे अनेक घटनाओं का चित्रण किया गया हैं जिसमें धार्मिक पहचान के आधार पर एक–दूसरे को हिंसा का शिकार बनाया गया हैं। हिन्दू संगठन का युवा सदस्य रणबीर एक बेकसूर इतर–फुलेल वाले वृध्द को छुरी मारकर उसकी हत्या कर देता है क्योंकि वह इतर–फुलेल बेचनेवाला एक मुसलमान था। सिक्ख दंगाईयों द्वारा मास्टर करीमदीन पर जानलेवा हमला इसलिये किया जाता है क्योंकि वह मुस्लिम धर्म का था। शहनवाज़ लाला के नौकर ननकू (जो कि शारीरिक तथा मानसिक रूप से कमज़ोर भी था) को इसलिये मार देता है क्योंकि दंगें में मारे गये मुसलमानों की लाशों को देखकर उसके भीतर कहीं न कहीं हिन्दुओं के प्रति रोष और बदले की भावना जगती है और उसी बदले की भावना से वह ननकू जैसे निहत्थे इंसान की प्राण सिर्फ इसलिये ले लेता है क्योंकि ननकू हिन्दू धर्म का था । बुर्ज़ुग हरनाम सिंह (भीष्म साहनी) और उनकी पत्नी बंतो उस मुस्लिम बहुल गांव में दो ऐसे प्राणी थे जो सिक्ख धर्म के अनुयायी थे। ये दोनों नेकदिल इंसान एक चाय की दुकान चलाकर अपना गुजारा करते थे। इस मुस्लिम बहुल गांव में हरनाम सिंह जन्में थे और करीम खाँन जैसे मुस्लिम दोस्तों संग खेल बड़े हुये थे । लेकिन भारत विभाजन के दंगों के दौरान धार्मिक पहचान के आधार पर बाहर से मुस्लिम बलबाईयों द्वारा हरनाम सिंह की दुकान को लूटकर दुकान और घर को आग लगा दिया जाता हैं।

सन् 1947 के भारत विभाजन की पृष्ठभूमि पर आधारित इस फिल्म में भारत विभाजन के पाँच दिन पूर्व से लेकर विभाजन के दिन तक घटनेवाली वाली घटनाओं का चित्रण किया गया है। राजनीतिकों के राजनीति के कारण फैले तनाव से सभी धर्म के लोग अपने–अपने सम्प्रदाय की सुरक्षा के लिये एकजुट होकर रणनीति तैयार करते हैं, मुस्लिम लीग पाकिस्तान का निर्माण करना चाहता थे, मास्टर देवव्रत जैसे राष्ट्रवादी लोग भारत में म्लेच्छविहीन हिंदू राष्ट्र की स्थापना करना चाहते थे इसके लिये हिंदू–संगठन रणवीर जैसे युवकों के माध्यम से अपने युवा समाज को हथियार चलाने की प्रशिक्षण देते हैं ताकि प्रयोजन पड़ने पर यह युवा समाज अपने हिंदू धर्म की रक्षा कर सके। सिक्ख सम्प्रदाय अपनी सुरक्षा के लिये गुरूद्वारे में इकट्ठा होकर असला इकट्ठा करते हैं। वामपंथी कार्यकर्ता कामरेड मीरदाद और उस दल के अन्य सदस्य अपने अपने सम्प्रदाय के लोगों के बीच जाकर अंग्रेज़ों की षडयंत्रों को समझाने की कोशिश करते हैं लेकिन असफल होते हैं। कांग्रेस पार्टी सर्वधर्म को अपनाकर धर्मनिरपेक्षता की बातें करता हैं और देश के बंटवारे के खिलाफ अभियान चलाता है। वहीं अंग्रेज़ों के नुमाइंदा डिप्टी कमीश्नर रिर्चड इस तनाव को भारतीयों की मज़हबी मामला कहकर संवेदनहीन बना रहता हैं जबकि वह चाहता तो दंगें को रोक सकता था। प्रस्तुत फिल्म में देखें तो ज्ञात होता है कि इस तरह की साम्प्रदायिक हिंसा का शिकार अमीर लोगों की तुलना में गरीब लोग अधिक होते हैं। नाथु बेघर होकर अपनी जान गंवाता हैं। हरनाम सिंह बेघर होते हैं। ननकू अपना प्राण गंवाता है, बेकसूर इतर–फुलेल वाले की प्राण ले ली जाती है , खालसा स्कूल के चपरासी पंडित की बेटी को मुसलमान अपने घर पर बैठा लेता है , गरीबों का घर–दुकान जला दिया जाता है, असंख्य शरर्णाथी भूख–प्यास के कारण अपना प्राण त्याग देते हैं, बेकसूर सिक्खणियाँ कुएँ में डूबकर अपनी आबरू बचाती हैं। इन सभी घटनायों का चित्रण गोविंद जी ने अपनी फिल्म में बारीकी से किया हैं।

साम्प्रदायिकता लोगों में संवेदनहीनता उत्पन्न करती हैं। फिल्म के क्लाइमेक्स में एक दृश्य में इसी संवेदनहीनता को देखा जा सकता है। रिलीफ कैम्प में जानमाल का आंकड़ा लिखनेवाला बाबू और हरनाम सिंह के बीच हुये संवाद दृष्टव्य हैं –

नाम ?

हरनाम सिंह

वल्दियत?

सरदार गुरदयाल सिंह

मौज़ा?
ढोक इलाहीबख्श
तहसील?
नुरपूर
कितने घर हिंदुओं, सिक्खों के थे?
केवल एक घर, मेरा घर जी
तुम बचकर कैसे आ गये?[11]

फिल्म की इस दृश्य में आंकड़ा लिखनेवाले बाबू की बातों और हावभाव से उसकी संवेदनहीनता की भावना झलकती है। उसे इस बात की हैरानी होती है कि एक वृध्द जो सिक्ख धर्म का अनुयायी है वह उस मुस्लिम क्षेत्र से जीवित कैसे आ जाता है। संवेदनहीनता के उस दौर में ऐसा नहीं है कि लोगों ने लोगों की मदद न की हो। विभाजन की त्रासदी के दौरान भी लोगों ने आपसी सौहार्द की मिसालें पेश की थी। एक सिक्ख स्त्री एक मुस्लिम मास्टर करीमदीन को सिक्ख दंगाईयों से बचाती है, करीम खाँन हरनाम सिंह को आगाह कर देता है ताकि हरनाम सिहं अपनी पत्नि को लेकर सुरक्षित जगह पर चले जाये, एक मुस्लिम स्त्री लाजो (सुरेखा सिकरी) विपत्ति की उस घड़ी में हरनाम सिंह और उनकी पत्नि बंतों की मदद करती है, उन दोनों के प्राण बचाती है, उनके लूटे हुये जेवर वापस लौटाकर मानवता और भाईचारे की मिसाल पेश करती है। वही यह वृध्द दम्पत्ति नाथू (ओम पुरी) और उसकी पत्नि करमो (दीपा साही) के बुरे वक्त में साथ देते हैं और उस असहाय दलित दम्पत्ति को अपने साथ सुरक्षित जगह पर ले जाते हैं।

इस प्रकार 'तमस'(1987) फिल्म के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भारत विभाजन का दौर भारतीय इतिहास की अत्यंत दुखद और त्रासदीपूर्ण समय रहा है। उस समय भारत के सभी जगहों में लगभग एक जैसी ही स्थिति थी। ब्रिटिशों की साजिशों के तहत साम्प्रदायिकता का प्रसार हुआ। लोगों में विपरीत धर्मों के प्रति भय, संदेह और हिंसा की भावना पैदा होने लगी थी। मुस्लिम लीग के राजनीतिकों द्वारा इन्हीं परिस्थितियों का फायदा उठाकर पाकिस्तान जैसे मुस्लिम राष्ट्र का निर्माण कर लिया जाता हैं वही दूसरी ओर हिंदू संगठन द्वारा भारत को म्लेच्छ विहीन हिन्दू राष्ट्र के रूप में स्थापित करने की कोशिश करते दिखाया गया हैं। उस दौरान सब लोगों की भावनायें तमसमय हो गई थी। बुध्दिजीवी वर्ग भी नासमझी की बातें करने लगे थे और अपने-अपने सम्प्रदाय के हितों और सुरक्षा की कोशिश में जुटे थे। हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख आदि सभी धर्म के अनुयायी विपरीत धर्म के लोगों के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने लगे थे जिससे हिंसा फैलती है और उस हिंसा का शिकार असंख्य बेकसूर गरीब लोग हुये थे। गोविंद जी ने भारत विभाजन की त्रासदी को इस फिल्म में बखूबी से फिल्माया है। गोविंद जी ने बचपन में भारत विभाजन के दौरान होनेवाली हिंसा और मारकाट को अपनी आँखों से देखा और अनुभव किया था। उनके बालमन पर उस साम्प्रदायिक हिंसा का गहरा प्रभाव पड़ा था। जिसकी छवियाँ गोविंद जी की निर्देशन में 'तमस'(1987) फिल्म में नज़र आती हैं। फिल्म की पटकथा, संवाद, संगीत, परिवेश , साजसज्जा, अभिनय सभी बातें ज़मीनी यथार्थ से जुड़ी हुई हैं। यह फिल्म भारत विभाजन के दौरान हुये साम्प्रदायिक दंगों की सूक्ष्म विश्लेषण करता है और उन मनोवृत्तियों से हमें रू-ब-रू कराता है जो अपनी विकृतियों का फल गरीब, दलित, शोषित तथा कमज़ोर वर्ग को भोगने के लिये मज़बूर करते हैं। साथ ही साम्प्रदायिक भावनाओं के पीछे छुपे हुये मनसूबों और उसके कारण फैलनेवाले दंगों के परिणामों को दर्शाकर दर्शकों को साम्प्रदायिक भावनाओं में न बहने की अपील भी प्रस्तुत फिल्म मेंदेखी जा सकती हैं।

संदर्भ सूची :

1. कथन, भूमंडलीकरण के दौर में भारतीय सिनेमा, वर्ष-33, अंक-1, जनवरी-मार्च 2012, संपादक-संज्ञा उपाध्याय, शब्द संधान प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ-संख्या-92.
2. भारतीय नया सिनेमा, सुरेंद्रनाथ तिवारी, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रकाशन, संस्करण-1996, दिल्ली.
3. भारत में सामाजिक समस्याएँ, प्रकाश नारायण नाटाणी, प्रज्ञा शर्मा, पृष्ठ संख्या-278.

4. भारत में सामाजिक विघटन, डॉ संजीव महाजन, पृष्ठ–संख्या–308.
5. साम्प्रदायिक दंगें और भारतीय पुलिस, विभूतिनारायण राय, पृष्ठ–संख्या–18.
6. साम्प्रदायिक समस्या, कानपुर दंगा जाँच समिति की रिपोर्ट, अनुवादक–दिवाकर, पृष्ठ–भूमिका.
7. फिल्म तमस से संवाद (1987), निर्माता–गोविंद निहालानी.
8. भारत में सामाजिक समस्याएँ, प्रकाश नारायण नटाणी,प्रज्ञा शर्मा, पृष्ठ–संख्या–278.
9. फिल्म तमस से संवाद (1987), निर्माता–गिवंद निहालानी.
10. साम्प्रदायिक दंगें और भारतीय पुलिस, विभूतिनारायण राय, पृष्ठ–संख्या–12
11. फिल्म तमस से संवाद, निर्माता–निर्देशक– गोविंद निहालानी।